धर्म्मवीर बालक।

(१)

इस धर्म्मवीर बालकका जन्म, संवत् १८०२ वि० में, पञ्जाबके प्रसिद्ध नगर "स्यालकोट" में हुआ था। इनके पिताका नाम बाघमल और इनकी माताका नाम गौरा था। ये लोग पूरे खत्री थे।

बाघमलजी, स्यालकोटके हाकिमके दरबारमें, किसी उच्च पदपर नौकर थे। उच्चपदाधिकारी तथा उत्तम जातिके होनेके कारण, इनके कुलदीपक पुत्र हकीकतरायजीका विवाह सिंह सम्प्रदायके एक उच्चवंशीय खत्रीके घरमें हुआ था।

जब हकीकतरायजी विवाहके हेतु श्वशुरालयमें गये, तब इनका श्वशुर, इनकी मोहिनी मूर्त्तिको देख और इनको होनहार समझ, इनपर मोहित होगया। अतएव उसने इनको कुछ दिनके लिये अपने यहां रखकर, धर्म्मका महत्व समझाना आरम्भ किया। श्वशुरका उपदेश हकीकतरायजीके अन्तःकरणमें, [illegible]; अर्थात् उस उपदेशने इनको स्वधर्म्मका सच्चा प्रेमी बना दिया।

जब हकीकतरायजी अपने पिताके घर आये, तब इन-के पिताने, राजकीय यवन-भाषा सिखलानेके लिये, इनको यवनपाठशालामें—जहां कि ७ वर्षकी वयसे ये पढ़ते थे—पुनः बिठला दिया। ये वहां नित्य पढ़नेके लिये जाते और सुशील बालकोंकी भाँति पाठाभ्यास करते थे।

एक दिवस, शालाका शिक्षक (मौलवी) बालकोंको छोड़कर, किसी कार्य्यके निमित्त कहीं गया हुआ था। उसकी अनुपस्थितिमें, यवन बालोकोंने, अपनी स्वाभाविक रीतिके अनुसार, हकीकतरायजीको छेड़ना आरम्भ किया। हकीकतरायजी चुपचाप बैठे रहे। जब उन यवन बाल-कोंने देखा, कि ये नहीं बोलते हैं, तब इनको काफ़िर, बेई-मान, बुत्परस्त (अर्थात् मूर्तिपूजक) इत्यादि कह कह-कर, उन्होंने इनके देवताओंको गालियां देना आरम्भ किया। इससे इनको भी बुरा लगा, और आवेगमें आकर, ये भी मुसलमानी धर्मके आचार्य्य "मुहम्मद" साहबकी बेटी फा-तिमा बीबीको बुरा भला कहने लगे।

इनकी बातें सुनकर मुसलमान छोकरे चिढ़ उठे और इनको मारने पीटने लगे। तब तो ये भी उनके सम्मुख खड़े हो गये, और जो इनके आगे आया, उसकी अच्छी तरहसे इन्होंने पूजा की।

जब मौलवी साहब आये, तब यवन छोकरोंने इनकी

शिकायत की। सुल्लाने हकीकतरायजीको अपने पास बुलाकर सब हाल पूछा। हकीकतरायजीने उत्तर दिया, कि प्रथम इन्हींसे पूछिये, कि पहले किसने छेड़छाड़ की। सुल्लाने मारकर कहा, "चाहे इन्होंने पहले बुरा भला कहा हो, पर तूने पैगम्बरजादीको गालियां क्यों दीं? क्या तू काफिर होकर नेकबख़्तको ऐसा कहेगा? खैर देख, इसका तुझे कैसा फल मिलता है।"

इतना कहकर, हठधर्म्मी सुल्ला काजीके निकट गया और वहां जाकर उसने हकीकतरायजीका सब वृत्तान्त उनसे कह सुनाया। काजी साहब सुनतेही आग-बगूले हो गये और तुरन्त निरपराध हकीकतरायको बन्दीखाने भिजवा, सुल्लाको साथ ले, नगरके हाकिमके पास गये।

उस समय, स्यालकोटका हाकिम, अमीरबेग नामक एक न्यायशील पुरुष था। उसने काजी और सुल्लाके मुखसे सब समाचार सुनकर उत्तर दिया, "बालकोंका लड़ना झगड़ना, गाली गलौज देना लेना, परस्पर हुआही करता है; कोई श्रेष्ठ पुरुष उनकी बातोंमें नहीं पड़ता है; इसलिये आप इस झगड़ेको न उठावें; केवल उसे धमकाकर छोड़दें।"

काजीने हाकिमकी बात सुनकर कहा—"आपका कथन सत्य है; परन्तु धर्म्मकी आज्ञामें बुद्धि और न्यायका क्या दख़ल? यह फैसला मेरे घरका थोड़ेही है। नगरमें

और भी जो धर्म्मशास्त्री (काज़ी) हैं, उनसे आप पूछलें, कि छोकरेके बारेमें मैंने जो व्यवस्था दी है, कि 'या तो यह मुसलमान होजाय, नहीं तो बध किया जाय'—ठीक है या नहीं।"

अमीरबेग, काज़ीके ये वचन सुन, कुछ देर विचारकर बोला, "खैर, तो यह मुकद्दमा शहरके विद्वानोंको सौंपा जाता है। आप कल दरबारमें पधारें।"

काज़ी, हाकिम की यह राय सुन, उठकर नगरमें गया,—और मुसलमानोंको, धर्म्मका जोश दिलाकर, भड़काने लगा।

इधर जब हकीकतरायजीके माता पिताको यह खबर मिली, तब वे बेचारे सुनतेही व्याकुलतासे दौड़ते हुए काज़ीके पास आये, और उनके पैरोंपर शिर रख, रो रोकर विनती करने लगे। किन्तु काज़ीका वज्रहृदय दयासे तनिक भी न पिघला!

दूसरे दिन आम दरबार हुआ। उसमें नगरके सर्वसाधारण हिन्दू मुसलमान इकट्ठे हुए। हाकिमने हकीकतरायजीके न्यायका भार नगरके विद्वानोंको सौंप दिया। नगरके सब विद्वान्, [illegible] मुसलमान थे; [illegible] उन्होंने काज़ी [illegible] "या तो हकी[illegible] किये जायँ।"

इन बातोंके सुनतेही, हकीकतरायजीके माता पिता, मूर्च्छित हो, भूमिपर गिरपड़े। जब उनको सुध आयी, तब वे काजीके पांवोंपर शिर रखकर विनती करने लगे, कि "आप इस अपराधमें हमारा घरवार, धन दौलत, जो कुछ है, सब ले लें; परन्तु कृपया हमारे पुत्रको क्षमा करदें।"

काजीने झिड़ककर उत्तर दिया—"क्या तुम मुझको लोभ दिखाकर धर्मका उल्लंघन कराना चाहते हो? यह काम मुझसे कदापि नहीं होगा।"

सत्य है,—

> जा तन लगै, वही तन जानै;
> कोऊ न जानै दुःख पराया।

एक ओर न्यायपरायण हाकिम अमीरबेगको, एक तुच्छ बात पर, ऐसा कठोर दण्ड वज्रके समान ज्ञात पड़ता था; और दूसरी ओर, हठधर्मी काजी और मुल्लाके भड़काये हुए मुसलमान खड़े अवसर ताक रहे थे, कि यदि यह (अमीरबेग) हिन्दुओंका पक्ष करे, तो इसको काफिर ठहराकर, अभी आसनसे उतार दें।" इससे हाकिम स्वयं भयभीत हो रहा था; परन्तु जिसके हृदयमें दया है, जो सत्यप्रिय है, जो न्यायका पक्षपाती है,—उससे क्या कभी जीते जी अन्याय हो सकता है? कदापि नहीं। अमीरबेगने निर्भय होकर कहा—

"भाइयो! दण्डित अभी एक नादान छोकरा है; जि-

सकी न तो अभी पूरे तौरसे हिन्दू धर्म्मकेही नियम मालूम हैं, न मुसलमानी धर्म्मके असूल (नियम)—। इसलिये, इसने जो कुछ बुरा भला कहा है, उसे केवल सुनी सुनायी रीतिसे कहा है। जैसे छोकरे परस्पर लड़ने समय एक दूसरेके माता पिताको गालियाँ दिया करते हैं; परन्तु उन गालियोंका अर्थ नहीं समझते; केवल सुनी सुनायी रीतिसे ही बकते हैं;—वैसेही हकीकतरायने भी कहाहै, न कि किसी प्रकारके द्वेषसे।"

काजी, हाकिमकी यह राय सुनकर, बड़े क्रोधमें आया, और उन्हें कुछ बुरा भला कहकर बोला—"यदि इसको यथार्थ दण्ड नहीं दिया जायगा, तो सारे नगरमें हलचल मच जायगी। हिन्दू पहलेहीसे शोख होगये हैं; इसको दण्ड न मिलनेसे और भी शोख हो जायँगे। क्या आप नहीं जानते, कि सिक्ख लोग, जो हिन्दुओंमेंसेही हैं, मुसलमानोंके साथ कैसी शरारत कर रहे हैं, और हिन्दुओंसे कुछ नहीं कहते; क्योंकि वे समझते हैं, कि वे हमारे भाई हैं! यदि इस छोकरेको दण्ड न मिलेगा, तो हिन्दू भी, सिक्खोंकी भाँति, मुसलमानोंका घरबार लूटने लग जायँगे। फिर, इसके सिवा, क्या एक धार्म्मिक मुसलमान, एक काफिरकी गालियाँ सुनकर चुप रह जाय? यदि ऐसा होगा, तब तो मोमिन (धर्म्मिष्ठ) मुसलमानोंको खड़े रहनेकी जगह भी नहीं मिलेगी!"

इसपर धर्मीरवेगने काजी, मुल्ला, तथा अन्य और मुसलमानोंको अलग ले जाकर कहा—"आप जानते हैं, कि यह हरकत एक नादान छोकरेसे हुई है; न कि किसी जवान व समझदार धार्म्मिक हिन्दूसे। इसीलिये मैं कहता हूं, कि इसको साधारण दण्ड देकर छोड़ दिया जाय; कठिन दण्ड देनेसे हिन्दूप्रजापर बहुतही बुरा असर पड़ेगा। यदि वे और कुछ न कर सकेंगे, तो शहर छोड़कर अवश्यही किसी अन्य राजाके राज्यमें जा बसेंगे। इससे एक तो नगरकी शोभा जाती रहेगी; दूसरे राज्यकी आमदनी घट जायगी; तीसरे देशमें लोग हलचल मचा देंगे; और चौथे सिक्खगण प्रबल होकर विशेष उपद्रव करेंगे;—इससे राज्यको बड़ा भारी धक्का लगेगा।"

काजी, यह बात सुन, लाल पीला होकर बोला—"मुझे बड़े शोकसे कहना पड़ता है, कि आप काफिरोंका पक्षकर, संसारके नतीजेसे डरते हैं; किन्तु परलोकका ध्यान नहीं करते। क्या आप यह नहीं जानते, कि धार्म्मिक नियमोंका उल्लंघन करनेवाला मनुष्य नरकगामी होता है? दूसरे आपका सामर्थ्यही क्या है, कि आप धार्म्मिक नियमोंके विरुद्ध कुछ कर सकें; जिनके आगे बड़े बड़े शाहनशाहोंको भी शिर झुकाना पड़ा, और पड़ता है, और पड़ेगा।"

काजीकी यह बात सुनकर, अमीरवेग चुपचाप पुनः

दीपक अपनी उस जन्मभूमिसे, जहां उसने अपने प्यारे मित्रोंके साथ खेलकूदकर आनन्द पाया था, जहां वह लालित पालित होकर इतना बड़ा हुआ था,—सदैवके लिये जुदा होता है। जुदा होते समय, उसके पावोंमें बेड़ियां और हाथोंमें हाथकड़ियां पहनायी गयीं, और नङ्गी तलवारोंका पहरा उसपर नियत किया गया। जब उसको चलनेको आज्ञा मिली, तब वह, सबको प्रणाम करके खुशी खुशी चल पड़ा। उस नगरमें शायदही कोई ऐसा वज्रहृदय मनुष्य होगा, जिसके नेत्रोंसे दो बूंद आंसू न गिरे होंगे। हकीकत रायजीके पीछे उनके माता पिता और श्वशुर, छाती पीटते और नेत्रोंसे जल बहाते, चले जाते थे। घरमें एकके सिवा, दूसरा कोई नहीं था।

लाहौरको जाते समय मार्गमें जो जो नगर गांव आते, वहांके निवासी हकीकतरायजीका समाचार पातेही, तुरन्त उनके देखनेको उठ आते, और उनके बचाव के लिये तन मन धनसे यत्न भी करते। ऐसी दशा केवल हिन्दुओंकी नहीं थी; वरन् कई दयालु मुसलमानोंकी भी थी;—जैसे शाहदरा नामक ग्रामके दरगाहीयगी एक प्रधान मुसलमानने मर्मभेदी वचनोंद्वारा काजीको समझाया था; पर कठोरहृदय काजीने एक न माना। निदान, तीसरे दिन सायंकालमें, हकीकतरायजी अपने हितैषी और शत्रुओंके सहित लाहौरमें पहुंच गये। उस समय दरगाही सरदार.

नगरके कुछ प्रतिष्ठित हिन्दुओं और मुसलमानों को अपने साथमें लेकर, पुनः काजीके पास गया, और वहां जाकर उसने उनको पुनः बहुत समझाया; किन्तु हठी काजीने एकबात भी न मानी । चौथे दिन सबेरेही, हकीकतरायजी, नाजिमके सम्मुख खड़े किये गये ।

(२)

हकीकतरायजी जिस समय दरबारमें लाये गये, उस समय ऐसाही कोई मनुष्य होगा, जो उनके पीछे न गया हो । दरबारमें पहुँचतेही, साधारण लोग तो बाहरसे वहांका दृश्य देखने लगे, और प्रतिष्ठित जन भीतर जाकर बैठे। उस समय दरबारके सब कर्म्मचारी अपने अपने काममें लगे हुए थे और नाजिम साहब एक उच्च सिंहासनपर विराजमान थे । उस बड़े दरबारको देखकर विदित होता था, कि मानों न्याय और धर्म्म दोनों हाथ जोड़े खड़े हैं । इससे यह पाया जाता था, कि निश्चय यहां न्याय होगा; किन्तु काजीके आतेही, हठने सत्यको, और अरःने न्यायको, भगा दिया । अब दरबारने स्यालकोटी दरबारका रूप धारण करलिया । क्योंकि जब इस दरबारमें भी वही व्यवस्थापक, वही हाकिम, और वही महकूम विराजमान थे, तब यहां न्यायकी आशा कैसे की जा सकती थी ? निदान काजीने मुकद्दमा पेश किया, और स्यालकोटी व्यवस्थाके

कागजात नाजिमके हाथमें दिये। नाजिम साहबने, कुछ देरतक उन्हें उलट पुलटकर मुकद्दमेकी जाँच की, और फिर अपने दरबारके विद्वानोंको उसका सारा समाचार कहके, इस विषयमें उनकी राय पूछी।

प्रधान काजीने सब बातें सुनकर उत्तर दिया,—"स्यालकोटके विद्वानोंने जो व्यवस्था दी है, वह ठीक मुसलमानी धर्म्मके अनुकूल है। उसमें किसी प्रकारसे अदल बदल करनेकी जगह नहीं है।"

यद्यपि नाजिम साहब खुद भी बड़े कट्टर मुसलमान थे; परन्तु नहीं मालूम इस मुकद्दमेने उनके हृदयमें क्यों दया उत्पन्न करदी। उन्होंने दुःखित होकर कहा,—"नहीं नहीं, दण्डित अभी नाबालिग है। उसे ऐसा कठोर दण्ड देना मेरी रायमें ठीक नहीं जँचता।"

काजीने कहा—"हुजूर, आपका फरमाना ठीक है; परन्तु धर्म्मव्यवस्थापर बुद्धि और न्यायका दखल नहीं चल सकता।"

यद्यपि नाजिमने कई प्रकारसे काजी और मुल्लाको समझाया; परन्तु उन्होंने हठका त्याग नहीं किया। इससे लाचार होकर, नाजिमको शरः (व्यवस्था) के आगे सिर झुकाना ही पड़ा। उन्होंने कहा—"हकीकतरायजी! शरःकी आज्ञा सुनते हो? वह कहती है, कि या तो मुसलमानी धर्म्म ग्रहण करो, या तलवारके नीचे सिर झुकाओ।"

नाजिमकी यह बात सुनकर, हकीकतरायजीने बड़े जोश और प्रसन्नतासे उत्तर दिया, "मृत्युके भयसे मैं अपना धर्म्म कदापि नहीं त्यागूंगा।" नाजिम और हकीकतरायकी बातें सुन, माता गौरा पागलोंकी तरह दौड़कर हकीकत रायके पास गयी और झट उन्हें गोदमें उठाकर रोती हुई बोली, "अरे पुत्र! यह तूने क्या कहा? ऐसा न कह। हे पुत्र! तू मुसलमान होजा; मैं जीते जी तुझे देखूंगी तो सही। लाल! तेरे न रहनेसे मेरी कुदशा हो जायगी। देख! मेरा कहना मान। पुत्र! श्रीरामचन्द्रजीने माता पिताकी आज्ञा पालनेके लियेही १४ वर्ष वनवास ग्रहण किया था; किन्तु आज्ञाका उल्लंघन नहीं किया था। पुत्र! तू हम बूढ़ोंपर दयाकर। देख चन्द! तूही हम बूढ़ोंका एकमात्र सहारा है; इससे तू हमारी आज्ञा मानकर मुसलमान होजा और हमारी रक्षाकर।"

हकीकतरायजी माताकी गोदसे नीचे उतरकर बैठ गये और हाथ जोड़कर बोले—"मां! तेरा कहना ठीक है; पुत्र वही है, जो माता पिताकी आज्ञा माने; पर विद्वानोंके मुखसे मैंने यह भी सुना है, कि यदि माता पिता अधर्म्म करनेकी आज्ञा दें, तो पुत्र कदापि न माने; इसमें पुत्रको दोष नहीं लगता। प्रह्लाद ध्रुवजी, जो मुझसे भी छोटे थे, उन्होंने भी माता पिताकी अधर्म्म-आज्ञाओंको नहीं माना था; फिर मैं तो उनसे बड़ा हूं; कैसे मैं तेरी इस आ-

आओ मानूं? मातेश्वरि! तू मुझे उत्तम शिक्षाके बदले कुशिक्षा न दे और स्वयं मुझे नरकमें न धकेल। माँ! तूनेही न मुझे ध्रुवजीकी कथा सुनायी थी? फिर उस कथाके विरुद्ध अब क्या शिक्षा दे रही है, इसका विचार कर। क्या मुसलमान होनेपर मैं सदैव जीता रहूंगा? और क्या तू मुझे सदैव देखती रहेगी? मेरी प्यारी माँ! मुझसे अधर्म्म कराके संसारमें अपयश मत ले। माँ! क्या तू वह क्षत्राणी नहीं है, जो धर्म्मरक्षाके लिये भस्म हो जाती थीं? बस, बस! पवित्र क्षत्रिय कुलको कलङ्कित न कर, और मेरे पाससे उठके चली जा; मैं कदापि तेरी इस आज्ञाको नहीं मान सकता। (धैर्य्य धरकर पुनः) मातेश्वरि! मेरा अपराध क्षमाकर। मैं अन्तमें तुझे प्रणाम करता हूं।"

इतना कहकर, हकीकतरायजीने माताके चरणोंपर शिर रखकर, प्रणाम किया; किन्तु स्नेहमयी जननी वहांसे नहीं हटी।

इतनेमें पुनः नाजिमने कहा, "ऐ नादान छोकरे! धर्मकी व्यवस्था अटल है; इसलिये तू मुसलमानी धर्म्म स्वीकार कर ले; इसीमें तेरा भला है। मुसलमान हुए बिना, तू किसी तरह नहीं बच सकता।"

सत्यप्रिय मुसलमान और हिन्दू इतिहास-लेखकोंने जहां हकीकतरायजीकी छोटी अवस्था और उनके भोलेपनका बहुत वर्णन किया है,—वहां उनके साहस और उनकी वीर मूर्त्तिका भी अच्छा खाका खेंचा है। एक लेखकने इस

विषयमें लिखा है, कि जिस पञ्जाबी हाकिमके दरबारमें मृत्यु हाथ जोड़े खड़ी रहती थी; जिसके मुखसे शब्द निकलतेही बड़े बड़े वीरोंका साहस जाता रहता था,—उसी दरबार और उसी हाकिमके सम्मुख निर्भय खड़े होकर, हकीकतरायजी बड़े साहसके साथ उत्तर देते थे।

जब नाजिमने दूसरी बार पूछा, तब हकीकतरायजी साहसपूर्ण शब्दोंमें बोले, "नाजिम साहब! आपका कथन सत्य है, कि बिना मुसलमानी धर्म्म ग्रहण किये, मेरी प्राणरक्षा होनी कठिन है; पर मैं इतना पूछता हूं, कि मैं परमेश्वर की आज्ञा मानूं, या शरःकी—जोकि मनुष्यकी बनायी हुई है? आपही विचारें, कि यदि परमेश्वरकी इच्छा मुझे मुसलमान बनानेकी होती, तो वह मुझे किसी मुसलमानीके गर्भसेही उत्पन्न करता, हिन्दू क्यों बनाता; परन्तु उसने तो मुझे एक हिन्दू—तिसपर एक कुलीन हिन्दूके घरमें उत्पन्न किया है। ऐसी अवस्थामें, इस पवित्र हिन्दू धर्म्मको त्याग, आपकी शरःकी आज्ञाको प्राण बचानेके लिये मान लूं, तो जिस ईश्वरने मुझे उत्पन्न किया है,—यदि पूछेगा, कि तूने मेरी इच्छाके विरुद्ध यह काम क्यों किया, तो मैं उसे क्या उत्तर दूंगा? इसलिये, थोड़े जीनेकी लालसासे, मैं उस प्रभुकी इच्छाके विरुद्ध यह कार्य्य नहीं करूंगा।"

हकीकतरायजीका साहसपूर्ण उत्तर सुनके, बाघमलने पास आकर कहा, "मेरे लाडले बच्चे! मेरे बुढ़ापे, मांके

खाये, और अपनी स्त्रीके रँड़ापेपर विचार कर। हे पुत्र! यदि तू जीवित रहेगा, तो हमभी कुछ दिन जीते रहेंगे। तेरे बिना बुढ़ापेमें हमारी सेवा कौन करेगा? यद्यपि हम जानते हैं, कि तेरे मुसलमान होनेपर हमारा सम्बन्ध छूट जायगा, पर तौभी तू कई प्रकारसे हमारी सेवा कर सकेगा। यदि सेवा भी नहीं कर सकेगा, तो हम केवल तुझे देखकर, खुशी खुशी अपने बुढ़ापेके दिन पूर्ण कर सकेंगे। इससे, हे पुत्र! तू हमारे लियेही मुसलमान होजा।"

हकीकतरायजीको,छोटी उमरमेंही, भजन बनाने और गानेका शौक था। पिताका विशेष आग्रह देखकर उन्होंने कहा,—

गजल।

मुसल्मां होनेको, ऐ पिता,
मैं तय्यार नहीं।
आपको नज़र है यह सर,
ज़रा इन्कार नहीं॥ मु॰
शरम होती, जो किसी —
पापके बदले मरता।
धर्मके वास्ते, जां देनेमें,
कुछ आर नहीं। मु॰
मत आफ़तोंसे डराओ;
मुझे डरना क्या है।
दूध अबाओंका पीना—
यही बेकार नहीं। मु॰

समझ क्या बैठे हैं, बुज़दिल
मुझे, मेरे दुश्मन ।
मुझमें उसकी सत्ता है,
जिसका वारापार नहीं ॥ सु०

मांका दुःख बीवीका रँड़ापा—
जो सुनाते हो मुझे ।
बस करो सुन जो लिया;
उनका क्या करतार नहीं ॥ सु०

तुम जिसे मांगते हो,
दुनियाके सुखके बदले ।
मुझको, वह त्यागके,
जीना भी तो दरकार नहीं ॥ सु०

धर्म ईश्वरकी अमानत है,
वह बेचूं क्योंकर ।
धर्मके बदले, मैं,
दुनियाका खरीदार नहीं ॥ सु०

धर्म औ जगत्के दुःख,
होते हैं अकसर साथी ।
फल पाओगे कहां,
साथ जहां ख़ार नहीं ॥ सु०

आत्मा मरता नहीं;
जिस्मको चाहे मारो ।
लोहेकी, आगकी,—
पानीकी, यहां मार नहीं ॥ सु०

काट सकते हो जो,
साहबका हकीकत काटो।
काटती थरत हकीकतको—
यह तलवार नहीं॥ मु०

निदान, माता पिता और आत्मीय सम्बन्धियोंने बहुत समझाया; परन्तु उनके समझानेका कुछ भी असर नहीं हुआ। तब नाजिमने फिर पूछा, "हकीकतरायजी! क्या इच्छा है? मुसलमान होते हैं या तलवारके नीचे सिर झुकाते हैं?"

हकीकतरायजीने बड़े साहससे उत्तर दिया-"नाजिम साहब! मैं हिन्दू धर्म और पवित्र क्षत्रियकुल को कलङ्क न लगा, तलवारके आगे सिर झुकानेके लिये तय्यार हूं।"

जब नाजिमने देखा, कि यह हठ नहीं छोड़ता है, तब उसने जल्लाद (बधक) को, हकीकतरायजीके बधकी आज्ञा देदी। आज्ञा पातेही, बधक उनको बधस्थानकी ओर ले चला।

हकीकतरायजी भी, निर्भयतासे निम्नलिखित गजल गाते हुए, उसके साथ चल पड़े,—

गजल।

चले हैं दश्त-गुरबतको,
वतन हम छोड़कर अपना।
नहीं अब कोई वाली बस,
सिवा वह दादगर अपना॥ चले०

नहीं परवा है मालोज़र,
ये ख़ाहिश है, कि हो जाये।
तेरी उल्फ़तमें बाक़ी उमरका
इसहा बसर अपना॥ चले०

अज़ीज़ो आशना अपने,
बिगाने हैं, सिवा तेरे।
कोई क्या काम आवेगा;
न होगा मालोज़र अपना॥ चले०

बस अब तौफ़ीक दे तू,
रञ्जोग़म दुनियाके सहनेको।
यही इक अर्ज़ है मेरी,
कि मक्सद आये बर अपना॥चले०

उस समय एकके सिवा, सब कुटुम्बी रोते पीटते साथ चल पड़े और सारे नगरके हिन्दुओंके मुखपर उदासी छा गयी। अकस्मात् उसी समय आकाशको बदलोंके एक खण्डने ढाँप लिया और पानी बरसने लगा। मानों यवनोंकी अन्यायसे स्वर्गके देवताओंके नेत्रोंसे भी आँसू निकल पड़े! अथवा स्यालकोटमें जो एक पवित्र आत्मा रह गयी थी, कदाचित् उसने ईश्वरकी अदालतमें फर्याद की हो; या अपने प्राणपतिके वियोगको सहन न कर, 'वह' उसे अपने साथ स्वर्गधाममें ले जानेके लिये आयी हो, और उसकी यह दशा देखकर आँसू बहाती हो!

जब वधक हकीकतरायजीको वधस्थानमें लेगया और उनको वध करनेके लिये म्यानसे तलवार निकालने लगा, तब उसके हृदयमें भी दया आयी। उसने कहा—"ऐ भोले भाले सुन्दर छोकरे! तू अबभी हठको छोड़ दे; मुसलमान होकर प्राण बचा ले। देख! तेरे माता पिता और कुटुम्बी रो रहे हैं; उनपर तो तू दयाकर।"

हकीकतरायजीने उत्तर दिया—"भई, तू जिसकार्थ के लिये आया है, उसको पूर्ण कर।"

जब जल्लादने देखा, कि यह अपना हठ नहीं छोड़ता है, तब वह लाचार होकर बोला—"अच्छा, यदि तेरी ऐसीही इच्छा है, तो तू बैठ जा और अपने इष्टदेवका ध्यान धरके सिर झुका दे।"

वधकका यह वचन सुनकर, हकीकतरायजी पलथी मारकर बैठ गये, और सिर झुका, ईश्वरका नाम स्मरण करने लगे,—

गजल।

अगर आँख खोलें,
तुझी दर नज़र है।
व गर कान खोलें,
तेराही ज़िकर है॥
तेरीही है कुदरत,
हरयक में जाहिर।

भाई पाठकगण! ज़रा विचार तो करो, कि एक-ओर माताका छाती पीट पीट कर रोना, दूसरी ओर पिताका विलाप करना, तीसरी ओर कुटुम्बियोंका आंसू बहाना, और चौथी ओर प्रेममयी पत्नीका वियोग सहन करते हुए एक ऐसे बालकका—कि जिसने संसारका कुछ भी आनन्द न लिया हो— धर्मके लिये साहस-पूर्व्वक बलिदान हो जाना!—क्या धर्म्मिष्ठ और वीरपुत्रके सिवा, दूसरा कोई ऐसा कर सकता है?

यदि हकीकतरायजी मुसलमानके हाथका एक चुल्लूभर पानी पी लेते, तो उनके प्राण बच जाते; अथवा मुखसे कलमा पढ़ लेते, तो फिर प्राण बचनेमें कुछ सन्देहही न रहता; परन्तु वीर पुत्रने इतनेहीमें अपने पवित्र धर्मका अपवित्र होना और क्षत्रिय कुलको कलङ्क लगाना समझकर, दोनों बातों को स्वीकार नहीं किया और अपना शिर दे दिया। परन्तु शोककी बात है, कि अब सनातन धर्मके कई अगुआ पानी तो क्या—होटलमें जाकर मद्य, सोडा और लेमानेड्की बोतलें परधर्म्मियोंके हाथसे लेकर गटागट् पीते हैं। इतनाही नहीं, वरन् अभक्ष्य मांस भी खाते हैं; और फिर धर्मसभाओंमें बैठकर धर्मका आन्दोलन भी करते हैं! भला ऐसे लोगोंके कथनका असर किसीके हृदयमें बैठ सकता है?—कदापि नहीं।

२६०९.

हे आर्य्य-जननि भारतभूमि ! तू हकीकतराय जैसे सच्चे धर्म्मिष्ठ पुत्र उत्पन्न करके, अपना नाम पुन: संसारमें विख्यात कर ।

हे ईश्वर ! तू हम भारत-सन्तानोंको हकीकतरायजी जैसा साहस प्रदान कर, कि हम तेरे पवित्र सनातनधर्म्मके महत्वको जान सकें ॥
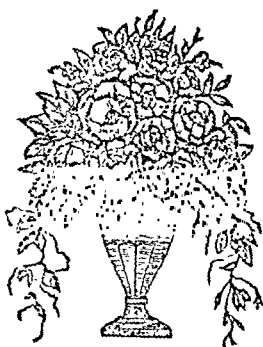
समाप्त ।

॥ उपन्यास ॥

अघोरपन्थी	ℓ)	अमलावृत्तान्तमाला	॥।)
अकबर उपन्यास	॥)	भूतों का मकान	॥)
अजीब अजनबी	॥)	गंगागोविन्दसिंह	॥।)
ईश्वरीलीला	ℓ)	हवाईनाव	।)
कमलिनी उपान्यास	।)	मधुमालती	॥।)
कांष्टेवृत्तान्तमाला	॥।)	कुलटा	ℓ)
कुसुमलता चार भाग	२।)	कुसुमकुमारी चारोभाग	१)
स्वर्गीय कुसुमकुमारी	॥।)	कटोराभर खून	॥ℓ)
काजल की कोठरी	॥ℓ)	किसान की बेटी	१।)
मनोरमा उपन्यास	॥ℓ)	चन्द्रकला	।)
चन्द्रकान्ता ४ भाग गुटका	१)	चंद्रकान्तासन्तति २४ भाग	१२)
जया उपन्यास	॥)	ठगवृत्तान्तमालाजिल्ददार	३॥)
डबल चोर	।)	संसारदर्पण	२)
दुर्गेशनन्दिनी दोनों भाग	॥।)	दीपनिर्व्वाण	॥।)
दीनानाथ का गृहचरित्र	।ℓ)	दलितकुसुम	।ℓ)
नरेन्द्रमोहिनी दोनोंभाग	१)	भयानकभ्रमण	॥।)
मायाविनी	।)	नरपिशाच चारो भाग	२)

रामकृष्ण वर्म्मा

भारतजीवन प्रेस काशी ।

बिहारी वीर।

अर्थात्

जगदीशपुर-निवासी, प्रसिद्ध वीर, बाबू कुँवर-सिंहकी संक्षिप्त जीवनी।

बाबू गङ्गाप्रसाद गुप्त लिखित।

जिसे "भारतजीवन" के अध्यक्ष बाबू रामकृष्णवर्म्माने
निज व्ययसे प्रकाशित किया।

॥ काशी ॥

भारतजीवनप्रेसमें मुद्रित हुई।

सन् १८०४ ई०।

प्रथम बार १०००] [मूल्य दो आना।

भूमिका ।

Here are men who fought in gallant actions,
As gallantly as ever heroes fought;
But buried in the heap of such transactions,
Their names are rarely found or often sought.
[Byron]—

बचपनहीसे बाबू कुँवरसिंहकी वीरताकी कहानी लोगोंके मुखसे हम सुनते आते थे । आजसे प्रायः १० वर्ष पूर्व, जिस समय हमारी अवस्था ८—८॥ वर्षकी थी, उसी समय सबसे प्रथम एकदिन हमारे यहांके एक वृद्ध नौकरने बाबू कुँवरसिंहके विषयमें हमसे कुछ कहा था । उस समय हमारा कौतूहल बहुत बढ़ गया था और वीरवर कुँवरसिंहकी विशेष बातें जाननेके लिये हमारा चित्त अत्यन्त व्याकुल हो उठा था; पर, विशेष वृत्तान्त न जाननेके कारण, वह नौकर हमारा कौतूहल निवारण न कर सका । फिर, सन् १८९७ इसवीके लगभग, जब हम स्कूलमें पढ़ते थे, तो विहारप्रान्तके एक महाशयने, जो उनदिनों शिक्षक बनकर काशीमें आये थे, हमको बाबू कुँवरसिंहके विषयमें बहुतसी बातें बतायी थीं ।

सन् १९०० ई०में, एण्ट्रेन्स क्लासतक अंगरेजी पढ़कर, जिस समय हम स्कूलसे अलग हुए, उस समय किसी कारणवश

दक्षिण भारतसे लौटते समय हमने कई स्थानोंमें प्रवास किया था। एकबार भुपाल, सैंहुना, नासिक, हरदा, इटारसी, मीरगञ्ज, जबलपुर, सतना, कटनी और रीवाँ होते हुए हम फिर इटारसीको लौट गये थे, और वहांसे फिर भूपाल, झांसी, कानपुर, लखनऊ आदि होकर घर आये थे। जब हम भूपालमें थे, तो वहीं हमने उक्त अङ्गरेजी कहानीके आधारपर एक छोटासा उपन्यास लिखनेकी चेष्टा की थी—और भगवत्कृपासे हमारी चेष्टा सफल भी हुई थी। वह कहानी "अब्दुल्लाका खून" के नामसे पुस्तकाकारमें छपकर भारतजीवन प्रेसमें तय्यार है।

इसके बाद हमने कई औपन्यासिक पुस्तकें लिख डालीं, और धीरे धीरे हमारा मन ऐतिहासिक ग्रन्थोंके पढ़ने तथा लिखने की ओर आकृष्ट हुआ। किन्तु केवल हिन्दी और अङ्गरेजी जान कर उत्तम ऐतिहासिक ग्रन्थ नहीं लिखे जा सकते थे, इसलिये, प्रयत्न करके, क्रमशः हमने बँगला, गुजराती और मराठी भाषाका भी अभ्यास किया। हम इस स्थान पर अपने उन मित्रोंका हृदयसे धन्यवाद करना नहीं भूल सकते, जिनकी कृपासे हम कई भाषाएँ सीख सके। श्रीवेंकटेश्वर समाचारके वर्तमान उपसम्पादक (Joint Editor) अथवा प्रयागसमाचारके भूतपूर्व प्रधान सम्पादक पण्डित जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल और बम्बईसे प्रकाशित होनेवाले "गुजराती भारतजीवन" और "वार्त्ताविनोद" नामक मासिकपत्रोंके सञ्चालक मिष्टर दाह्याभाई रामचन्द्र मेहताके अनुग्रह और उत्साहदानसेही हम अत्यन्त अल्पकालमें

विहारी वीर।

अर्थात्

जगदीशपुरनिवासी, प्रसिद्ध वीर, बाबू कुँवर-सिंहकी संक्षिप्त जीवनी।

सन् १८५७ ई०में, जिस समय भारतवर्षमें गदर मच गया था; हिन्दुस्थानी सिपाहियोंने जिस समय जोशमें आकर अपने अपूर्व साहसका परिचय दे दिया था; भारतवर्षके एक सिरेसे दूसरे सिरेतक सब स्थान जिस समय नररक्तसे रँग गये थे; मृत्युकी कराल छायाने, निराशा और दुःखके घोर अन्धकारने, जिस समय भूमण्डलके एक बड़े खण्डको ढँक लिया था,—उस समय विहारप्रान्तके एक वृद्ध वीरपुरुषने, अपने मान सम्मानकी रक्षाके लिये, अपनी प्रतिष्ठाके बचानेके लिये, अपने जीवनके अन्तिम दिनतक अनुपम वीरता और तेजस्विता दिखाकर, लोगोंको चकित, चमकित, स्तम्भित और हैरान कर दिया था। इन प्रतापी, वृद्ध, वीरपुरुषका नाम था—"कुँवरसिंह।"

कुँवरसिंह, आरा जिलेके अन्तर्गत जगदीशपुर नामक स्थानके, बड़े भारी जिमींदार थे। डुमराँवके राजघरानेके साथ इनका विशेष सम्बन्ध था। बहुत लोग कहते हैं, कि गदरके समय

रेविन्यूबोर्ड उनको मुहलत देगी; कुछ समय मिलनेहीसे वे सब कर्ज सुगमतासे चुका सकेंगे। कुंवरसिंहको ऐसाही आशा थी और इसी आशा पर उन्होंने सब बातोंका मुनासिब बन्दोबस्त किया था। परन्तु उनकी वह आशा फलवती नहीं हुई। बहुत शीघ्र, चुपके चुपके, रेविन्यूबोर्डने उनको अधिक हानि करनेकी चेष्टा की! जिस समय कुंवरसिंह रुपया पानेको इधर उधर फिक्र कर रहे थे, जिस समय वे अपने मित्रों और हितैषियोंसे रुपया उधार लेकर कर्ज चुकानेका बन्दोबस्त कर रहे थे, उसी समय रेविन्यू-बोर्डने पटनेके कमिश्नरके द्वारा उनको सूचित किया, कि—"यदि एक महीनेके अन्दर अन्दर आप सब रुपया न चुका देंगे, तो बोर्ड, गवर्नमेण्टसे इस बातका अनुरोध करेगी, कि वह आपकी जिमींदारीसे आपका सम्बन्ध एकदम तोड़वा दे।" इस बातसे कुँवरसिंह दुःखित हुए। एक महीनेके अन्दर अन्दर सब रुपया चुका देना किसी प्रकार सम्भव नहीं था; अतएव बोर्डकी आज्ञासे उनकी भारी हानि हुई। वे गवर्नमेण्टके मित्र और हितैषी थे। उनको आशा थी, कि समय समय पर गवर्नमेण्ट उनकी मदद करेगी। किन्तु बोर्डकी बेवकूफीसे अन्तमें उनकी सब आशाओं पर पानी फिर गया। कुंवरसिंह तेजस्वी थे; इसलिये दुःखित होने पर भी उनकी तेजस्विता कम नहीं हुई। इस क्षति, इस दुःख, इस अपमानकी बात अक्षय अक्षरोंमें उनकी चौड़ी छातीमें लिखी रही।

कुँवरसिंह क्रूर नहीं थे। वे बिना कारण किसीपर अत्या-

चार करके अपने स्वभावकी कड़ाईका परिचय नहीं देते थे। जो जो अच्छे गुण एक क्षत्रिय वीरमें होने चाहियें, वे सब (गुण) उनमें मौजूद थे। लोग कहते हैं, कि कुँवरसिंह रुपयेके लिये कभी किसीको दुःख नहीं देते थे। उनकी प्रजा जो कुछ उनको सन्तुष्ट-चित्तसे देती थी, उसे वे खुशीके साथ ले लेते थे। यदि उनके अधिकारमें रहनेवाले किसी रोजगारीको किसी व्यापारमें आशासे भी अधिक लाभ होता था, तो वे स्वयं उसके यहां जाकर कुछ रुपये मांग लेते थे; किन्तु डराकर, धमकाकर, या जोर जबर्दस्ती दिखाकर नहीं।

कुँवरसिंहकी उपाधि "बाबू" थी। इसलिये सब लोग उनको 'बाबू कुँवरसिंह' के नामसे पुकारते थे। समस्त शाहाबाद जिलेमें 'बाबू' कुँवरसिंहका मान था;—समस्त शाहाबाद जिलेके लोग श्रद्धा, प्रीति और प्रशंसाके साथ बाबू कुँवरसिंहका नाम लेते थे।

हम पहलेही लिख चुके हैं, कि रेविन्यूबोर्डके विचारसे बाबू कुँवरसिंहकी भारी हानि हुई। परन्तु यद्यपि बाबू कुँवरसिंह इस बातसे मनमें बहुतही पीड़ित हुए; यद्यपि इस भारी दुःखका झटका उनके हृदयमें जोरसे जाकर लगा; तौभी सहसा वे गवर्नमेण्टके विरुद्ध खड़े नहीं होगये; जोशमें आकर उन्होंने सहसा अपनी अधीरताका परिचय नहीं दे दिया; ईष्टइण्डिया कम्पनीका अधिकार तोड़नेकी इच्छासे वे तलवार खींचकर सहसा समरभूमिमें खड़े नहीं होगये। वे जैसे गम्भीर थे, वैसेही साधु, कर्तव्यपरायण और

पवित्र भी थे। अंगरेजोंने भी समय समय पर उनकी प्रशंसा की थी। जबतक हिन्दुस्थानमें गदर नहीं मचा था, जबतक रेविन्यूबोर्डने उनको दुःखित नहीं किया था, तबतक गवर्नमेण्ट भी कुँवरसिंहका आदर करती थी।

सन् १८५७ ई०की १४ वीं जूनको पटनेके कमिश्नर टेलर साहबने गवर्नमेण्टको लिखा,—"यद्यपि अनेक लोगोंने कई जिमींदारोंकी, विशेषकर बाबू कुँवरसिंहकी, राजभक्तिके विरुद्ध बहुतेरी बातें मुझको लिखी हैं; किन्तु कुँवरसिंहके साथ मेरी जैसी मित्रता है—गवर्नमेण्टके ऊपर उनका जैसा अनुराग है, उससे मैं उन पत्रप्रेरकोंकी बातों पर विश्वास नहीं कर सकता।" इसके बाद आठवीं जुलाईको कमिश्नर साहबने फिर लिखा,—"बाबू कुँवरसिंहमें सब कुछ करनेकी सामर्थ्य है; किन्तु इस समय उनको कोई सहारा नहीं है। उन्होंने अनेक बार पत्र लिखकर अपनी राजभक्ति और अपना दुःख मुझपर प्रकट किया है।"

शाहाबादके मजिष्ट्रेटकी भी कुँवरसिंहके विषयमें वही राय थी, जो पटनेके कमिश्नरकी थी। बाबू कुँवरसिंह पर गहरा विश्वास दिखाते हुए मजिष्ट्रेट साहबने गवर्नमेण्टको लिखा था, कि "जो गड़बड़ इस समय उपस्थित है, उसमे अनेक लोग बाबू कुँवरसिंहके विरुद्ध अनेक बातें कहने लगे हैं; किन्तु मैं उन बातों पर विश्वास करनेका कोई वजह नही देखता हूं। कमिश्नर साहबने उनकी राजभक्तिके बारेमें बहुत सन्तोषजनक राय प्रकट की है; उसमें सन्देह करनेका कोई कारण दिखाई नहीं देता।

कुँवरसिंहकी राजभक्ति ऐसीही बढ़ीचढ़ी थी। इसी सच्ची और दृढ़ राजभक्तिके कारण गवर्नमेण्टके आगे उनका सम्मान होता था। यदि अंग्रेज अफसर लोग जरा सीधी चालसे चलते; यदि वे सदा धीरभावसे समझबूझकर बाबू कुँवरसिंहके साथ बर्ताव करते, तो शायद आज इस इतिहासके लिखनेकी आवश्यकता न होती और बाबू कुँवरसिंह पकी हुई अवस्थामें जोशमें आकर गवर्नमेण्टको तङ्ग न करते—दुःख न देते। किन्तु बात औरही हुई; अंग्रेज अफसरोंने नासमझी की; बाबू कुँवरसिंह दुःखित हुए और विवश हो उनको गवर्नमेण्टका बागी बनकर राजपूती जोश दिखानाही पड़ा।

जिस समय गदर मचा हुआ था, जिस समय गाँवपर गाँव लूटे उजाड़े जा रहे थे, जिस समय नगरोंमें रक्तकी धारा बह रही थी, उस समय अंग्रेज अफसर लोग सन्देहकी दृष्टिसे चारों ओर देख रहे थे। उनकी इस सन्देह-दृष्टिमें यदि धीरता और परिणामदर्शिता होती, तो विश्वासी लोग भी अविश्वासी न समझे जाते और गवर्नमेण्ट को विपद्में न पड़ना पड़ता। किन्तु ईश्वरकी ऐसी इच्छा नहीं थी। उस समय जिनमें कुछ सामर्थ्य था, जिनकी लोग प्रतिष्ठा और इज्जत करते थे,—उनको भी, उनके विश्वासी और सच्चा होने पर भी, अंग्रेज अफसरोंने अविश्वासी समझा।

समस्त शाहाबादमें कुँवरसिंहकी असाधारण प्रतिष्ठा थी। अनेक गुणोंके कारण लोग उनको बहुत मानते थे। किन्तु गदरके स-

जिनकी अंग्रेजोंके साथ सच्ची प्रीति और मित्रता थी; वेही इस समय दूतकी बात सुनकर मनमें बहुत दुःखित हुए। परन्तु उसके आगे उन्होंने किसी प्रकारकी अधीरता नहीं दिखायी; सहसा क्रोधने उनपर अपना असर नहीं डाला। उन्होंने पहलेकी तरह धीरभावसे, पहलेकी तरह निर्विकार चित्तसे, अपनी बीमारी और लाचारीका उल्लेख किया; फिर अन्तमें लिखा, कि बीमारीसे आराम होने और ब्राह्मणोंके शुभ दिन बता देनेपर, मैं आपसे मुलाकात करने आऊँगा।

इधर दूतने, कमिश्नर साहबकी आज्ञाके अनुसार, कुँवरसिंहके विश्वास अविश्वासके विषयमें जाँच करना आरम्भ किया। जब उसे कुँवरसिंहके विरुद्ध कोई प्रमाण नहीं मिला; जब चारोंओर देखभालकर उसने निश्चय करलिया, कि बाबू कुँवरसिंह गवर्नमेण्टके विरुद्ध नहीं है; तब वह लाचार होकर लौट गया। वह तो लौट गया, किन्तु इस बातसे कुँवरसिंहके क्रोधकी सीमा न रही। इसके थोड़ेही दिन बाद, वे अपने साथ बहुतसे आदमियोंको लेकर किसी रिश्तेदारके विवाहमें जाना चाहते थे; परन्तु अंग्रेज अफसरोंने नाहक डरकर उनको ऐसा करनेसे मना किया।

अविचारपर अविचार होते देखकर बाबू कुँवरसिंहका चित्त भी अंग्रेजोंकी ओर से हट गया। एकबार अंग्रेज अफसरोंके अविचारसे उनकी जिमींदारीको नुकसान पहुँच चुका था; इस बार उनकी प्रतिष्ठा और उनके मानको भी धक्का पहुँचा। अवश्यही उन्होंने एक बार ब्रिटिश गवर्नमेण्टसे बन्धुत्व बाँधा था; अपनेको उम

मित्र और हितैषी कहा था; किन्तु अब उलटा फल दिखाई दिया। अंग्रेज अफसरोंने अकारण उनपर सन्देह किया; अकारण उनको अविश्वासी बनादेनेकी उन्होंने चेष्टा की; एक मुसलमान दूतको उनकी जिमींदारीमें भेजकर उनके विश्वास अविश्वासके विषयमें अनुसन्धान कराया; उनकी राजभक्तिके विरुद्ध प्रमाण संग्रह करनेका उद्योग किया; ये सब ऐसी बातें थीं, जिन्हें देखकर कुँवर-सिंह, धैर्य्यवान् होकर भी, बुद्धिमान् होकर भी—अपनेको रोक नहीं सके; इस अत्याचार और इस अविचारको वे चुपचाप सह नहीं सके! अपने वंशके गौरवकी और पूर्वपुरुषोंके मानकी रक्षा करनेका उन्होंने निश्चय करलिया; मानों उनका बुढ़ापा दूर होगया और जवानीके उमङ्गसे उनका शरीर भर गया। क्रोधमें आकर उन्होंने ब्रिटिश गवर्नमेण्टके विरुद्ध दृढ़ताके साथ तलवार पकड़ ली!

उस समय एक एक करके भारतवर्षके सब प्रधान प्रधान स्थानोंमें गदर आरम्भ हुआ! पञ्जाबसे लेकर कुमारिका तक,—और सिन्धुसे ब्रह्मदेश पर्य्यन्त, भयानक हलचल मच गयी। इस भीषण गदरके समयमें यदि बाबू कुंवरसिंह गवर्नमेण्टके पक्षमें होते, तो शायद शाहाबादमें खूनकी नदी न बहने लगती और अंग्रेज लोग वहां सिपाहियोंके द्वारा मारे काटे न जाते। परन्तु अफसरोंके बुद्धिदोषके कारण बात बिल्कुल विपरीत हुई। इसके बाद, जिस समय उनके पास आकर सिपाहियोंने उनको अपना सर्दार बनाना स्वीकार किया और अंग्रजोंके खूनसे अपना हाथ

भरनेकी प्रतिज्ञा की, उस समय उन्होंने भी, भले बुरेका विचार न करके, उनका साथ देही दिया।

२७ जुलाई (१८५७) को, दानापुरके सिपाही, आरामें आकर, कुंवरसिंहके दलमें मिल गये। कुंवरसिंहके भाई अमरसिंह भी उस समय अस्त्र शस्त्रमे सज्जित होकर अंग्रजोंके विनाशके लिये उद्यत हुए। धीरे धीरे अनेक मनुष्य आ आकर इस दलमें इकट्ठे होने लगे। अन्तमें एक बड़ी भारी सेना, कुंवरसिंहकी मातहतीमें, अंग्रेजोंके विरुद्ध खड़ी होगयी। उस समय बाबू कुंवरसिंहने सर्कारी खजाना लूट लिया; कैदियोंकी हथकड़ी बेड़ियां काट दीं और अदालतके सब कागज पत्र नष्ट करडाले। किन्तु उनकी आज्ञासे किसीने कलेक्टरीके कागजात खराब नहीं किये। कुंवरसिंहने यह सोचकर कलेक्टरीके कागजात नष्ट करनेसे अपने साथियोंको मना करदिया था, कि उनके न रहनेसे लोगोंकी जिमींदारीका हिसाब लगानेके समय गड़बड़ी पड़ेगी;— जिस समय अंग्रेज मारकर देशसे निकाल दिये जायंगे, जिस समय देशका अधिकार अपने हाथमें आवेगा, उस समय जिमींदारोंका हिसाब तय्यार करनेमें बाधा पड़ेगी। कुँवरसिंहको ऐसीही आशा थी; इसी आशा और विश्वासपर वे कमर कसकर अंग्रजोंके विरुद्ध खड़े हुए थे; किन्तु अंग्रेज अफसर भी अपनी रक्षा करनमें असावधान नहीं थे। इसी समय ईष्ट इण्डियन रेलवे बन रही थी। आरेके पास जो लोग रेलवेमें काम करते थे, उनके ऊपर एक इञ्जिनियर था। उसका नाम विकर्सबायल

था। आरेमें विकर्सवायलका एक दुमञ्जिला मकान था। उसीमें अंग्रेज अफसरोंने रक्षा पायी।

पचास सिक्ख सैनिक विकर्सवायलके मकानमें छिपे हुए अंग्रेजोंकी रक्षाके लिये तय्यार हुए। कुँवरसिंहने उक्त मकानके नष्ट करनेकी बहुत चेष्टा की। पहले उन्होंने उसकी दीवारके नीचे कुछ सूखी पत्तियां इकट्ठा करके उनमें आग लगादी। परन्तु हवाका बहाव दूसरी तरफ होनेके कारण उससे अंग्रेजों की कुछ हानि नहीं हुई। जब आसपास पड़े हुए मरे घोड़ोंकी लाशोंकी दुर्गन्धि भी, वायुके बहावके प्रतिकूल होनेके कारण, उस मकानतक नहीं पहुँचा, तब अन्तमें कुँवरसिंहने दो तोपें लाकर मकानके आगे स्थापित कीं; परन्तु पासमें उत्तम गोली बारूद न होनेके कारण उन तोपोंसे कुछ विशेष लाभ नहीं हुआ। लोग ऐसा भी कहते हैं, कि उस समय अंग्रेजोंने मकानके आगे कुछ गायें बाँध रखी थीं; ताकि कुँवरसिंह और उनके साथी गोवधके भयसे गोली बारूदकी वर्षा न आरम्भ करें। इस बुद्धिसे यद्यपि अंग्रेज लोग अपनी रक्षा करसके, पर कुँवरसिंहका आक्रमण रोकनेमें वे समर्थ नहीं हुए। कुँवरसिंहके साथी बड़ी मुस्तैदीके साथ उनकी आज्ञा माननेके लिये तय्यार थे। अंग्रेज लोग विकर्सवायलके मकानके बाहर निकलकर उनका कुछ भी नहीं बना सके।

धीरे धीरे अंग्रेजोंके खानेकी चीजें समाप्त हो गयीं; धीरे धीरे वे बिलकुल निस्तेज हो गये; उनकी आँखोंके आगे अँधियारी छा गयी; और वे, हाथ उठाकर, बचावके लिये बारम्बार ईश्वरसे प्रार्थना करने लगे।

यह सुनकर, कि आरेमें कुँवरसिंहने उपद्रव मचा रखा है, दानापुरके सेनापति मिष्टर लायडने, पटनेके कमिश्नर टेलर साहब की सलाहसे, कुछ योरपियन अफसरों और सिक्ख सैनिकोंके आराकी ओर रवाना करदिया। सब मिलकर प्रायः ४०० सैनिक और १५ अफसर, कप्तान डानवरकी मातहतीमें, आराकी ओर चल निकले। २६ वीं जुलाईकी शामको ये लोग जहाजसे उतरे। सैनिकगण दिनभरके भूखे थे; इसलिये जहाजसे उतरकर वे रोटी वगैरह बनानेकी फिक्र करने लगे। आरेके रास्तेमें एक खाल पड़ती थी। उसको पार करनेके लिये कुछ सैनिक नावकी खोज करने लगे। ७ बजते बजते, सब लोग, खालके पार उतर कर, आराकी ओर चले। रास्तेमें उनको बहुत देर लग गयी।

कोई दोपहर रात बीती होगी। चन्द्रदेव धीरे धीरे अपनी किरणें समेटकर अस्त हो रहे थे; ऐसे समय सैनिकोंने कप्तान डानवरसे उस रात्रिमें विश्राम करनेकी अनुमति चाही; किन्तु डानवरने उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की।

अंग्रेजी सेना आराके पास पहुँचही रही थी, कि सहसा बगलकी अमराईमें आग बल उठी। सहसा अग्नि भयानक रूपसे चारों ओर फैल गयी! थोड़ीही देरमें लगातार गोलियोंकी वर्षा होने लगी—लगातार सैनिक मारे जाने लगे! स्वयं सेनापति डानवर घायल हुए। कोई दूसरा उपाय न देखकर, बची हुई अंग्रेजी सेना सोन नदीकी तरफ हटगयी।

कुँवरसिंहके सैनिकोंने इसी प्रकार अंग्रेजी सेनाकी [illegible]

पहुंचवा दिया; निर्बल बङ्गालियोंका खून करके अपने वीरधर्म्मको नष्ट नहीं किया । वृद्ध कुँवरसिंहकी प्रकृति ऐसीही उन्नत थी; ऐसेही पवित्र वीरधर्म्मसे उनका हृदय अलंकृत था ।

जेनरल आयार साहब पहली अगस्तको गजराजगंज नामक गांवमें पहुंचे । रास्तेके दोनों ओरके धानके खेत पानीमें डूबे हुए थे । कुछ आगे बढ़कर, साम्हनेकी तरफ, एक छोटासा घना जङ्गल था । अङ्गरेजी सैन्यका रास्ता रोकनेके लिये कुंवरसिंहने अपने कुछ साथियोंको इसी जगह ठहरा दिया था ।

दूसरी अगस्तको आयार साहब आगे बढ़नेकी तय्यारियां कर रहे थे; इतने में अकस्मात् लड़ाईके बाजोंके बजनेके शब्द सुनाई दिये । बाजोंका शब्द सुनतेही उन्हें निश्चय होगया, कि कहीं निकटही में शत्रु लोग ठहरे हुए हैं । थोड़ीही देरमें कुंवरसिंहके सैनिक उस जङ्गलसे बाहर निकले । आयार साहब भी मुकाबिलेके लिये तय्यार हुए ।

उधर कुंवरसिंहके सैनिक बृक्षोंकी बगलसे गोलियां बरसाने लगे । इधर आयार साहबने, आगे तोपें रखकर, दागनेकी आज्ञा दी ।

कुंवरसिंहके साथियोंमें अधिक साहस और अधिक पराक्रम था । उनकी सैन्यसंख्या भी अंगरेजोंकी अपेक्षा अधिक थी । किन्तु वे दो बातोंमें अपने शत्रुओंसे कमजोर थे । प्रथम यह, कि उनके पास तोपें नहीं थीं; दूसरे—उनकी बन्दूकें भी बहुत घटिया थीं । इन कारणोंसे उनके सैनिक देरतक अंगरजोंका

रास्ता नहीं रोक सके। लगातार तोपोंकी मार पड़नेसे उन्हें हट जाना पड़ा। उस समय, रास्ता साफ देखकर, अंगरेजी फौज धीरे धीरे आगे बढ़ने लगी। दो मीलतक बराबर चले जानेके बाद उसको एक नदी मिली। बरसातका मौसिम होने के कारण नदीका पानी जोरोंपर था। नाव भी आसपासमें कहीं दिखाई नहीं दी।

नदीके दूसरे किनारे बीबीगंज नामक एक छोटासा कसबा था। पार उतरनेके लिये जो पुल था, उसे कुँवरसिंहने तुड़वा डाला था। अतएव, आयारने, कुछ आगे बढ़कर, नदीके दूसरे किनारे उतरनेका विचार किया। फिर वे दक्षिणकी ओर घूमकर रेलके पुलकी तरफ बढ़े। इस पुलसे होकर आरेको एक रास्ता गया था। आयार उसी ओर चले।

इधर कुँवरसिंह निश्चेष्ट नहीं थे। बहुतसे सिपाही साथ लेकर, नदीके दूसरे किनारेपर, उक्त पुलकी ओर उन्होंने बढ़ना आरम्भ किया। अंगरेज सेनापतिने इसबारभी उनपर गोलोंकी वृष्टि करना शुरू किया; पर इसबार कुंवरसिंह किसी तरह नहीं रुके। बड़े तेज, बड़े उत्साह और बड़ी बहादुरीके साथ वे समरभूमिमें डटे रहे। बीबीगंजके पास उसदिन भयानक खूनखराबी होगयी।

'पुलके पासही एक छोटा किन्तु घना जङ्गल था। आयार साहबके वहांतक पहुँचते न पहुँचते कुंवरसिंहने उस बनपर अपना अधिकार करलिया। थोड़ीही देरमें वृक्षोंकी ओटसे अंग्रेज वीरोंपर लगातार गोलियां बरसने लगीं; लगातार गोलियोंकी

जगदीशपुरके रास्तमें छोटे छोटे कई जंगल थे। कुंवरसिंहकी सेनाएँ इन्हीं जंगलोंमें जमा होकर मिष्टर आयारके रोकनेकी चेष्टा करनेको थीं—पर उनकी चेष्टा सफल न हो सकी। आयारने, जगदीशपुरमें जाकर, बाबू कुंवरसिंहके सब मकानात गिरवा दिये! और तो क्या;—उस दुष्टने देवमन्दिरका विध्वंश करनेमें भी संकोच नहीं किया! ईश्वरभक्त वीर कुंवरसिंहने बहुत रुपये खर्चकर एक देवालय स्थापित किया था; नालायक आयारने उस देवालयको भी तुड़वाकर पवित्र हिन्दूधर्मकी बेइज्जती की! कुंवरसिंहके दोनों छोटे भाइयों (अमरसिंह और दयालुसिंह) के मकानातभी इसी तरह नष्ट किये गये। जगदीशपुरसे कुछ दूरपर, जीतरा नामक स्थानमें, कुंवरसिंहका एक और भी मकान था। सेनापति आयारने फौज भेजकर उसे भी मिट्टी में मिलवा दिया!

जगदीशपुर विध्वस्त हुआ; किन्तु कुंवरसिंह पकड़े नहीं जा सके। कुछ लोगोंका खयाल है, कि उस समय वे ससरांवकी ओर चले गये थे। जो हो; बहुत चेष्टा करके भी अंगरेज उन्हें नहीं पा सके। लोग कहते हैं, कि एकदिन, जब वे घोड़ेपर सवार होकर सोनके पार उतर रहे थे, उसी समय कुछ दूरपर अंगरेजोंका एक ष्टीमर जा रहा था। उस ष्टीमरके किसी अंगरेजने कुंवरसिंहको देखकर, इनपर फायर किया। गोली सनसनाती हुई आकर इनके बायें हाथमें घुस गयी। गोलीकी चाट खाकर भी, साहसी, धीर, गम्भीर और वीर कुंवरसिंहने नि-

प्रसन्नताके साथ नदीको पार किया। पीछे यह समझकर, कि म्लेच्छ अंगरेजकी गोली लगनेसे यह हाथ अपवित्र होगया, उन्होंने उसे काटकर पानीमें डाल दिया। अन्तमें इसी आघातसे उनका प्राण गया।

कुँवरसिंहको एक कहानी बहुत पसन्द थी। यदि कभी किसी कारणसे उनकी तबीयत खराब होती थी, तो वे तत्काल अपने किस्सख्वांको उस कहानीके सुनानेकी आज्ञा देते थे। वह कहानी यों है,—"एकदिन महाराज विक्रमादित्य, अपने भाई भर्तृहरिको राज्यभार सौंपकर, वेष बदले हुए अनेक स्थानोंमें घूमने निकले। विदा होते समय महाराज भर्तृहरिने उनसे कहा, कि यदि राज्यमें कोई बड़ी घटना हो जायगी और उसमें आपकी सलाहकी जरूरत पड़ेगी, तो हम एक विशेष प्रकारकी डुग्गी पिटवा देंगे; जिसे सुन आप हमारा मतलब समझ जाइयेगा। इसके बाद दोनों भाइयोंने इस बातका भी एक उपाय स्थिर किया, कि यदि असमयमें बनावटी वेष न पहचानकर द्वार-पाल भीतर न घुसने दे, तो यह काम करनेसे ठीक होगा। भर्तृहरिजीने कहा, कि चाहे जिस समय आप आवें, आप द्वार-पालके द्वारा सन्देश भेजते समय यह सङ्केत भी बता दें। ऐसा करनेहीसे हम समझ जायंगे, कि आप आगये हैं।" ये बातें स्थिर करके, महाराज विक्रमादित्य, सूरत बदले हुए, अपने भाईसे विदा हुए। भर्तृहरिजी यथानियम राज्यशासन करने लगे।

"कुछ दिनके बाद राज्यमें एक भारी घटना संघटित हुई।

पहले किये हुए परामर्शके अनुसार, भर्तृहरिने सांकेतिक धुनी बि-छा दी। धुनी सुनकर महाराज विक्रमादित्य जहां थे वहांसे फ़ौरनही राजधानीकी ओर चल पड़े। रातके सन्नाटेमें दुर्गद्वार पर पहुंचकर उन्होंने भर्तृहरिसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। महाराजको न पहचानकर – और उनको अपरिचित जानकर – द्वारपालने पहले तो भर्तृहरितक उनका सन्देश पहुंचानेहीमें आपत्ति की; किन्तु पीछे, बहुत कहने सुननेसे, उसने राजाके पास जाकर विक्रमादित्यका सांकेतिक सन्देश कह सुनाया;–कहा, 'महाराज! एक सन्यासी द्वारपर खड़ा है। वह आपसे मिलना चाहता है।' भर्तृहरिने तुरन्तही सन्यासीको अपने शयनागारतक लानेकी द्वारपालको आज्ञा दी।

"द्वारपालने आकर छद्मवेषी विक्रमादित्यको भर्तृहरिजीकी अनुमति सुनायी। महाराज विक्रमादित्यने राजशयनागारमें पहुंचकर देखा, कि पलंगके पास रुधिरकी धारा बह रही है और भर्तृहरि चुपचाप बैठे हैं। उन्होंने आतेही उनसे इस रक्तप्रवाहका कारण पूछा। भर्तृहरिने यह कहकर, कि यह एक बहुतही सामान्य घटना है, बात उड़ानेकी चेष्टा की। किन्तु जब विक्रमादित्यने विशेष आग्रहके साथ पूछा, तब वे बोले, कि "सचमुचही यह एक बहुत सामान्य बात है। मेरी स्त्री पलंगपर सोयी थी; इतनेमें मुझे आपके आनेकी खबर लगी। आपसे राजनीति-सम्बन्धी बहुतसी गूढ़ बातें करनी थीं; इसलिये-सोचकर, कि उसको यहांसे हटाना या स्वयं दूसरी

श्चिन्तताके साथ नदीको पार किया। पीछे यह समझकर, कि म्लेच्छ अंगरेजकी गोली लगनेसे यह हाथ अपवित्र होगया, उन्होंने उसे काटकर सोनमें डाल दिया। अन्तमें इसी आघा-तसे उनका प्राण गया।

कुँवरसिंहको एक कहानी बहुत पसन्द थी। यदि कभी किसी कारणसे उनकी तबीयत खराब होती थी, तो वे तत्काल अपने किस्सःख्वांको उस कहानीके सुनानेकी आज्ञा देते थे। वह कहानी यों है,—"एकदिन महाराज विक्रमादित्य, अपने भाई भर्तृहरिको राज्यभार सौंपकर, वेष बदले हुए अनेक स्थानोंमें घूमने निकले। विदा होते समय महाराज भर्तृहरिने उनसे कहा, कि यदि राज्यमें कोई बड़ी घटना हो जायगी और उसमें आपकी सलाहकी जरूरत पड़ेगी, तो हम एक विशेष प्रकारकी डुग्गी पिटवा देंगे; जिसे सुन आप हमारा मतलब समझ जाइयेगा। इसके बाद दोनों भाइयोंने इस बातका भी एक उपाय स्थिर किया, कि यदि असमयमें बनावटी वेष न पहचानकर द्वार-पाल भीतर न घुसने दे, तो यह काम करनेसे ठीक होगा। भर्तृहरिजीने कहा, कि चाहे जिस समय आप आवें, आप द्वार-पालके द्वारा सन्देश भेजते समय यह सङ्केत भी बता दें। ऐसा करनेहीसे हम समझ जायंगे, कि आप आगये हैं।" ये बातें स्थिर करके, महाराज विक्रमादित्य, सूरत बदले हुए, अपने भाईसे विदा हुए। भर्तृहरिजी यथानियम राज्यशासन करने लगे।

"कुछ दिनके बाद राज्यमें एक भारी घटना संघटित हुई।

पहिले किये हुए परामर्शके अनुसार, भर्तृहरिने सांकेतिक दुर्गा सिखा दी। इसे सुनकर महाराज विक्रमादित्य वहाँ से वहाँसे एकाएकही राजधानीकी ओर चल पड़े। रातके सन्नाटेमें दुर्गद्वार पर पहुँचकर उन्होंने भर्तृहरिसे मिलनेकी इच्छा प्रगट की। महाराजको न पहचानकर —और उनको अपरिचित जानकर— द्वारपालने पहले तो भर्तृहरितक उनका सन्देश पहुँचानेहीमें आपत्ति की; किन्तु पीछे, बहुत कहने सुननेसे, उसने राजाके पास जाकर विक्रमादित्यका सांकेतिक सन्देश कह सुनाया;—कहा, 'महाराज! एक सन्यासी द्वारपर खड़ा है। वह आपसे मिलना चाहता है।' भर्तृहरिने तुरन्तही सन्यासीको अपने शयनागारतक लानेकी द्वारपालको आज्ञा दी।

"द्वारपालने जाकर छद्मवेषी विक्रमादित्यको भर्तृहरिजीकी अनुमति सुनायी। महाराज विक्रमादित्यने राजशयनागारमें पहुँचकर देखा, कि पलंगके पास रुधिरकी धारा बह रही है और भर्तृहरि चुपचाप बैठे हैं। उन्होंने आतेही उनसे इस रक्तप्रवाहका कारण पूछा। भर्तृहरिने यह कहकर, कि यह एक बहुतही सामान्य घटना है, बात उड़ानेकी चेष्टा की। किन्तु जब विक्रमादित्यने विशेष आग्रहके साथ पूछा, तब वे बोले, कि "सचमुचही यह एक बहुत सामान्य बात है। मेरी स्त्री पलंगपर सोयी थी; इतनेमें मुझे आपके आनेकी खबर लगी। आपसे राजनीति-सम्बन्धी बहुतसी गूढ़ बातें करनी थीं; इसलिये यह सोचकर, कि उसको यहाँसे हटाना या स्वयं दूसरी जगह

आपसे बातें करना ठीक नहीं है; क्योंकि ऐसा करनेसे पीछे वह इस विषयमें प्रश्न करके मुझे बहुत दिक करती,—मैंने उसके दो टुकड़े करडाले और उसकी लाशको चारपाईके नीचे डाल दिया। उसीका रुधिर आप बहता हुआ देख रहे हैं।" भाईकी बातोंसे विक्रमादित्यने पहलेकी अपेक्षा अधिक गम्भीर होकर कहा, 'भाई! राजनीतिके विषयमें तुम्हारा अनुभव कम नहीं है। अतएव अब मुझसे सलाह लेनेकी कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती।' यह कहके, महाराज विक्रमादित्य वहांसे उठकर चल गये।"

यह कहानी समाप्त होतेही बाबू कुंवरसिंह बोल उठते थे, कि "भर्तृहरिने बहुत अच्छा काम किया। राजनीतिके लिये ऐसे साहस और ऐसी दृढ़ताका परिचय देनाही उचित है।" कुंवरसिंहने राजनीतिका गौरव कहांतक समझा था, इस बात का अनुमान पाठकगण इस कहानीके प्रति उनका अनुराग देखकर अच्छी तरह समझ सकते हैं। समस्त शाहाबादमें कुँवरसिंहका इतना प्रताप था, कि कोई खुलाखुली या घरके बरण्डेमें बैठकर तम्बाकू पीनेका भी साहस नहीं करता था। साहस और प्रतापके कारण, कर्म्मदक्षता और दृढ़प्रतिज्ञाके सबब, वीरवर कुंवरसिंहका नाम सबहीकी जबानपर रहा करता था।

कुंवरसिंह अपने दलके सबलोगोंको, बिना 'कर' लियेही, जमीन दे देते थे। गरीब दुःखी भी उनके पास जाकर खाली हाथ नहीं लौटते थे। कहते हैं, कि अपनी इसी उदारताके कारण बाबू साहब ऋणग्रस्त हुए थे।

जिस समय लड़ाईमें हारकर कुंवरसिंहने जगदीशपुर परित्याग किया, उस समय अंगरेजोंसे युद्ध करनेके लिये कई औरतें भी उनके साथ निकलीं। इन वीर क्षत्रियाणियोंने अंगरेजोंके हाथमें जानेकी अपेक्षा समरक्षेत्रमें लड़कर जान दे देनेका दृढ़ संकल्प करलिया था। ऐसी जनश्रुति है, कि जिस समय बाबू कुंवरसिंहने यह सुना, कि अंगरेजोंने उनका देवमन्दिर तुड़वा डाला है, उस समय बड़े क्रोधके साथ जगदीशपुरमें आकर कितनेही अंगरेजोंका उन्होंने संहार करडाला था। उसके बाद अंगरेजोंने भी सैन्य लाकर युद्ध किया था। इस युद्धमें कुंवरसिंह की ओर अनेक कोमलाङ्गी राजपूत रमणियोंने शामिल होकर प्रकृत वीरताका परिचय दिया था। अन्तमें, जब जीतकी आशा न रही, तब तोपके आगे जाकर आपही उन्होंने अपना जीवन नष्ट किया। प्रायः १५० रूपवती युवतियोंने, इस प्रकार वीरता दिखाकर, युद्धक्षेत्रमें अपने प्राण गँवाये थे।

सुनते हैं, जिस समय बाबू कुंवरसिंह हाथीपर चढ़कर नदीपार उतर रहे थे, उस समय अंगरेजोंकी तरफकी एक गोली आकर उनके बायें हाथमें लगी थी और बाबू साहबने उसी समय यह कहकर, कि "मा गङ्गे! अपने सन्तानका यह अन्तिम उपहार ग्रहण करो" वह हाथ काटके नदीमें डाल दिया था। अन्तमें इसी आघातसे, भागीरथीके गर्भमें, हाथीकी पीठपर, उनकी मृत्यु हुई।

॥ इति ॥

॥ काव्य के ग्रन्थ ॥

अलकशतक और तिलशतक	=)	अलङ्कारदर्पण	।)
अङ्गदर्पण	=)	अन्योक्तिकल्पद्रुम	।=)
अङ्गादर्श	।)	अष्टयाम	≡)
उपालम्भशतक	=)	काव्यनिर्णय	॥)
कविकुलकण्ठाभरण	=)	कलियुग पचीसी	=)
कर्णाभरण	=)	कविकीर्तिकलानिधि	=)
कार्तिकस्नान	/)	काशीकविसमाज प्र०भा०	॥)
कविसमाज दूसरा भाग	॥।)	कविसमाज तीसरा भाग	॥।)
कविसमाज चौथा भाग	॥)	चरणचन्द्रिका	=)
चेतचन्द्रिका	।=)	छन्दोमञ्जरी	॥=)
जगद्विनोद संपूर्ण	॥)	दीपप्रकाश	=)
नखसिख (केशोदासकृत)	=)	प्रियाप्रीतमविलास	।)
प्रबोधपचासा	=)	पद्माभरण	≡)
पजनेसप्रकाश	।)	प्रेमलतिका	।=)
फागचरित्र	।=)	बजरंगबत्तीसी	/)
बुढ़ियाबखान	/)	बसन्तमञ्जरी	≡)
बिहारीसतसई	१॥)	वृन्दविनोदसतसई	।)
बिरहा	/)	भड़ौआसंग्रह चारो	॥=)

रामकृष्णवर्म्मा

भारतजीवन प्रेस बनारस